सत्य है एकरस

महापुरूषों, सन्तों से सुना है कि ज्ञान की भाषा एक होती है फिर वह किसी भी सम्प्रदाय का क्यों न हो। ज्ञानी सन्त आत्मा के धर्म को मानते हैं और सम्प्रदाय से मुक्त होते हैं। उनके श्रीमुख से निसृत अमृत वाणी एक दूसरे से मिलती है एवं उनके साधना द्वारा अर्जित अनुभव भी समान होते हैं।

ऐसा ही सामन्जस्य सन्त कबीर और सद्गुरू श्रीश्रीमाँ में नजर आता है। जैसे कबीर साहब की लेखनी पूरी की पूरी योग साधना के उनके अनुभव को दर्शाती है एवं ज्ञान से ओतप्रोत है, वैसे ही अगर हम सद्गुरू श्रीश्रीमाँ की लिखी पुस्तकों का अवलोकन करें तो वे भी उनके योग साधना के अनुभवों को ही दर्शाती हैं। कबीरदास जी की लेखनी देहाभ्यन्तरस्थ सभी रहस्यों को उजागर करती है जिससे स्पष्ट पता चलता है कि सन्त कबीर ॐकार साधना में निपुण थे। श्रीश्रीश्यामाचरण लाहिड़ी महाशय का क्रियायोग साधन भी ॐकार साधन या गीता का साधन है, जो कि षट्चक्रों, इड़ा-पिंगला-सुषुम्ना एवं कुलकुण्डलिनी के रहस्यों को बताने वाला तथा इनकी साधना कराने वाला है। शायद यही वजह है कि सन्त कबीरदास जी एवं श्रीश्रीमाँ के आध्यात्मिक दोहों या लेखों को बिना साधना किये उनके गूढ़ अर्थों को समझ पाना असम्भव है। एकमात्र स्थिर बुद्धि साधक ही उन्हें समझ सकता है। श्रीश्रीमाँ ने लिखा भी है:–

''मन करो ॐकार साधन–
ॐकार ज्योति अति सुमहान।
ॐकार ब्रह्मनाद करो ज्ञान
ॐकार देह में ही लेना होगा त्राण ॥
ॐकार मुद्रा है गोपन में
सद्गुरू से लेना होगा जान।
जब ॐकार ध्वनि हृदय में बजे
स्थिर भाव में करो आत्म आस्वादन ॥
ॐकार जप में प्रकाश पाये आत्माराम
जपो ॐकार मन ही मन अविराम।
ॐकार बीज मंत्र होगा शुद्ध धन
दान करता है विश्व को महाज्ञान ॥
ॐकार में जगे हृदय में ईशान
महद्ज्योति ब्रह्म ॐकार नाम।
ॐकार माता ॐकार पिता
ॐकार ही है एकमात्र भगवान ॥ **–श्रीश्रीमाँ**

कबीरदास जी एक ओर निर्गुण निराकार ब्रह्म के उपासक थे जो उनकी रचनाओं से स्पष्ट है तथा दूसरी ओर वे सगुण साकार साधक थे और राम के अनन्य भक्त थे। श्रीश्रीमाँ के क्षेत्र में भी हमें यही देखने को मिलता है। एक ओर उनका क्रियायोग साधन निर्गुण ब्रह्म का ॐकार साधन है तथा दुसरी ओर वे काली और कृष्ण दोनों की उपासक हैं। उनका यही मानना है कि सगुण और निर्गुण दोनों साधना न होने तक साधक की साधना परिपूर्ण नहीं हो सकती है। उनके शिष्य जैसे योग साधना करते समय उज्ज्वल प्रकाश का दर्शन करते हैं वहीं दूसरी ओर अपने-अपने इष्ट देवताओं का पूजन भी किया करते हैं।

''राम'' नाम में है दो अक्षर
हृदय में जपो राम नाम निरन्तर ॥
रामज्योति है आत्म साक्षर
हृद में बसे राम आत्म पुरन्दर ॥
राम रूप में है विज्ञान का ज्ञान
राम में देखो पुरूषोत्तम मान।
राममय होकर आत्माराम को
देखो निरन्तर अक्षय पद को ॥ **–श्रीश्रीमाँ**

इसीतरह ब्रह्मोपासक कबीरदासजी ने भी राम का गुणगान इन शब्दों में किया है :–

''ऐसा राम जपु मोर भाई, जासे आवागमन मिटाई
ज्ञानी बहुत कथै जो ज्ञाना, तासो उपजत मन अभिमाना
सब मिली सुनुरे ज्ञान हमारा, राम रहा अनहुते न्यारा।
पंडित पढि गुनु वेद भुलाना, वेद पढ़ै पुनि भेद न ज्ञाना
संध्या तरपन अरू आचारा, राम रहा अनहुते न्यारा।''

कबीरदासजी मुसलमान होते हुए भी सब धर्मों को आदर देते थे एवं सबको समान रूप से मानते थे। वे जाति भेद के विरोधी थे तथा मुसलमान होने पर भी श्रीराम के परम भक्त थे। कबीरदास जी की ही भाँति श्रीश्रीमाँ जाति सम्प्रदायमुक्त समाज को प्रश्रय देती हैं। उनके शिष्य सभी

सम्प्रदायों के हैं। वे किसी भी जाति के प्रति भेदभाव नहीं रखती हैं एवं सभी को समान नजर से देखती हैं। यहाँ तक कि वे नारी पुरूष के भेद को भी नहीं मानती हैं। उनका मानना है कि नारी और पुरूष बाहरी आवरण हैं तथा उनमें अवस्थित जो आत्मा है वह सबमें एक है एवं वह परमात्मा का अंश है।

कबीरदासजी ने अपने दोहों में बताया है कि जो व्यक्ति जैसा होता है वह वैसी ही होली खेलता है। होली खेलने से उनका अभिप्राय उनके चरित्र एवं उनके आचार-व्यवहार से है। कबीरदासजी ने बताया है कि सन्तगण अपने अन्तर में सच्चिदानन्द के परमानन्द को अनुभव कर मंगलमयी होली खेलते हैं। बसन्त के समान खिला उनका जीवन आनन्द से सराबोर रहता है तथा अपने सम्पर्क में आने वाले सभी लोगों को वे आनन्द की होली खेलाते हैं। श्रीश्रीमाँ न सिर्फ खुद आध्यात्मिक होली खेलती हैं बल्कि अपने प्रेम, वात्सल्य, मृदुता के रंगों से अपने भक्तजनों को भी सराबोर कर देती हैं। उनके श्रीमुख की अमृतमयी वाणी प्रेम के रंगों से घुली पिचकारी की फुहारों के समान होती है जो अपने प्रेम से सबको बाँध कर रखती है और चुम्बक की तरह सबको आकर्षित करती है। हम सभी अपने-आप को धन्य समझते हैं जिन्होंने श्रीश्रीमाँ के जैसा सद्गुरू पाया है।

–श्रीश्रीमाँ की कृपापात्री
–मातृचरणाश्रिता–श्रीमती सुशीला सेठिया

चण्डी रहस्य

श्रीपंचानन भट्टाचार्य

(३)

चण्डी में उक्त देवगण के कृत देवी स्तव का तात्पर्य यही है कि प्राणशक्तिरूपा देवी ही गुणादि देवगण के एवं इन्द्रियाधार सकल की एकमात्र अधिष्ठात्री देवी हैं। प्राणशक्ति के अस्तित्व के बिना गुणादि देवगण या इन्द्रियाधारगण किसी का भी अस्तित्व नहीं रहता है। प्राणशक्तिरूपा देवी ही एकमात्र विश्वब्रह्माण्ड में व्यापक रूप में रहती है; यह विश्वब्रह्माण्ड भी प्राणशक्ति के अभाव में मुहूर्त काल भी स्थायी नहीं रह सकता है। अतएव शरीरस्थ प्राणशक्तिरूपा देवी ही जीव समूह की एकमात्र प्रणम्य और आराध्य देवी है। उक्त देवी के ही महामाया के वश हुआ जीव अन्धा होकर उस देवी को अमूल्य रत्न न जानकर आत्महारा हो कर, ज्वाला को प्राप्त हो रहे हैं। अन्ध व्यक्ति यष्टि (अंधदण्ड) विहीन होने से, जैसे उसका प्रति पदक्षेप में पतन होना अवश्यम्भावी है। भ्रमान्ध जीव के प्राणशक्तिरूपा देवी को अवलम्बन नहीं करने से उसका प्रति पदक्षेप में पतन होना अवश्यम्भावी है। परन्तु भ्रमान्ध जीव यदि प्राणशक्तिरूपा देवी महामाया भगवती को अन्ध व्यक्ति के यष्टि के सदृश दृढ़ता से अवलम्बन कर सके तब उसका ऐसा एक दिन निश्चय आयेगा कि वह चक्षुष्मान होकर संसार मोह से निश्चय ही निष्कृति पायेगा, इसमें अणुमात्र संदेह नहीं है। प्राणशक्तिरूपा महामायारूपिणी महादेवी ही जीव के धर्म, अर्थ, काम और मोक्ष लाभ की एकमात्र तरणीस्वरूपा है। विषय शक्तिरूप आसुरीभाव के प्रधान नायकद्वय शुम्भ और निशुम्भ इस प्राणशक्तिरूपा महादेवी के हाथों हतबल हुए थे। शुम्भ वामा नासास्थित इड़ा रूप वहिर्वायु है जिसकी वहिर्गति का विस्तार होने से 'भोगीकान्त' नामक वायु के द्वारा जीव का नाश शीघ्र ही होता है; अर्थात्, वाम और दक्षिण नासा स्थित वायु की गति का जितना विस्तार होगा, जीव की मृत्यु उतनी ही निकट होती है। शुम्भ-शुनभ धातु अर्थात् दीप्ति पाना से उत्पन्न है अतएव, जो आसुरी भाव प्रकाशित होकर विषयादि में धावित कराते हुए अलक्षितभाव में जीव की आयुक्षय कराता है एवं विषयासक्त भाव की भी वृद्धि कराता है, वही शुम्भ पदवाच्य है। निशुम्भ-दक्षिण नासा स्थित पिंगला रूपी वहिर्वायु, नासा के वाह्य भाग में इसकी गति होती है। इसका भी कार्य जीव का नाश करना है। यह उभय ही भातृस्वरूपा है। वाम और दक्षिण नासास्थित वायु वहिर्मुखीन भाव में जितनी विस्तृत होगी आसुरीभाव उतना ही दीप्ति प्राप्त होकर जीव के जीव भाव को सम्पूर्ण आसुरीभाव में परिणत करके विषयाकांक्षा की वृद्धि करके जीव को सकाम कार्य में